संत-परू वणाणुयोगद्दारे गदिमग्गणापरू वणं

मनुष्यगतौ गुणस्थानान्वेषणार्थमुत्तरसूत्रमाह-

मणुस्सा चोद्दससु ट्ठाणेसु (१.मु.गुणट्ठाणेसु।) अत्थि मिच्छाइट्ठी, सासण-सम्माइट्ठी, सम्मामिच्छाइट्ठी, असंजदसम्माइट्ठी, संजदासंजदा, पमत्तसंजदा, अप्पमत्तसंजदा, अपुव्वकरण-पविट्ठ-सुध्दि-संजदेसु अत्थि उवसमा खवा, अणियट्टि-बादर-संपराय-(२. मु. सांपराइय)पविट्ठ-सुध्दि-संजदेसु अत्थि उवसमा खवा, सुहुम-संपराय-(३.मु. सांपराइय)-पविट्ठ-सुध्दि-संजदेसु अत्थि उवसमा खवा, उवसंत-कसाय-वीयराय-छदुमत्था, खीण-कसाय-वीयराय-छदुमत्था, सजोगिकेवली, अजोगिकेवली त्ति (४. मनुष्यगतौ चतुर्दशापि सन्ति । स.सि. १. ८.)।। २७ ।।

एयस्स सुत्तस्स अत्थो पुव्वं उत्तो त्ति णेदाणिं वुच्चदे, जाणिद-जाणावण-(५.मु.जाणावणे।)फलाभावादो । पुव्वमवुत्तमुवसामण-खवण-विहिं एत्थ संबध्दमुवसामग-क्खवग-सरुव-जाणावणट्ठं संखेवदो भणिस्सामो । तं जहा, तत्थ ताव उवसामण-विहिं वत्तइस्सामो । अणंताणुबंधि-कोध-माण-माया-लोभ-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-मिच्छत्तमिदि एदाओ सत्तपयडीओ असंजदसम्माइट्ठि-प्पहुडि जाव अप्पमत्तसंजदो त्ति ताव एदेसु जो वा

इस आर्ष-वचनसे जानते हैं कि असंयतसम्यग्दृष्टि जीव तिर्यंचनियोंमें उत्पन्न नहीं होते हैं ।

अब मनुष्यगतिमें गुणस्थानोंकेअन्वेषण करनेकेलिये आगेका सूत्र कहते हैं -

मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि, संयतासंयत, प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, अपूर्वकरण-प्रविष्ट-विशुध्दि-संयतोंमें उपशमक और क्षपक, अनिवृत्ति-बादरसांपराय-प्रविष्ट-विशुध्दि-संयतोंमें उपशमक और क्षपक, सूक्ष्मसांपराय-प्रविष्ट-विशुध्दिसंयतोंमें उपशमक और क्षपक, उपशांतकषाय-वीतराग-छद्मस्थ, क्षीणकषाय-वीतरागछद्मस्थ, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली इस तरह इन चौदह गुणस्थानोंमें मनुष्य पाये जाते हैं ।। २७ ।।

इस सूत्रका अर्थ पहले कहा जा चुका है इसलिये अब नहीं कहते हैं, क्योंकि, जिसका ज्ञान हो गया है उसका फिरसे ज्ञान करानेमें कोई विशेष फल नहीं है । पहले उपशमन और क्षपणविधिका स्वरुप नहीं कहा है, इसलिये यहां पर संबन्ध-प्राप्त उपशमक और क्षपकके स्वरुपका ज्ञान करानेके लिये उपशमन और क्षपणविधिको संक्षेपसे कहते हैं । वह इस प्रकार है । उसमें भी पहले उपशमनविधिको कहते हैं---

अनन्तानुबन्धीक्रोध, मान, माया और लोभ, सम्यक्प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व तथा

सो वा उवसामेदि (१ वेदगसम्माइट्ठी जीवो x x अणंताणुबंधी विसंजोइय अंतोमुहुत्तं अधापवत्तो होदूण पुणो पमत्तगुणं पडिवज्जिय असादअरदिसोगअजसगित्तिआदीणि कम्माणि अंतोमुहुत्तं बंधिय दंसणमोहणीयमुवसामेदि । घवला अ.पृ.४३६. वेदयसम्मादिट्ठी अणंताणुबंधी अविसंजोएदूण कसाए उवसामेदुं णो उवट्ठादि । अविसंजोइदाणंताणुबंधिचउक्कस्स वेदयसम्माइट्ठिस्स कसायोवसामणाविबंधणदंसणमोहोवसामणादिकिरियासु पवुत्तीए असंभवादो । जयध. अ.पृ. १००२. उवसमचरियाभिमुहा वेदगसम्मो अणं विजोइत्ता । अंतोमुहुत्तकालं अधापवत्तो पमत्तो य।। ल.क्ष. २०५. णत्थि अणं उवसमगे । गो.क. ३९१. 'णिरयतिरियाउ दोण्णि वि पढमकस्सायाणि दंसणतियाणि । हीणाएदे णेया भंगे एक्केक्कगा होंति ।। गो.क. ३८४.' इति वचनादुपशमश्रेण्यां १४६ प्रकृतिसत्त्वस्थानस्य सभ्दावादनन्तानुबन्धिचतुष्कस्य सत्तापि विभाव्यते, ततो ज्ञायते यद् द्वितीयोपशम-सम्यक्त्वमनन्तानुबन्धिन उपशमेनापि भवति । अविरतसम्यग्दृष्टिदेशविरतप्रमत्तसंयतानामन्यतमोऽनन्तानु-बन्ध्युपशमनां चिकीर्षु: x x यथाप्रवृत्तकरणमपूर्वकरणं च करोति । क.प्र.पृ.२६७. वेयगसम्मद्दिट्ठी चरित्तमोहुवसमाए चिट्ठंतो । अजउ देसजई वा विरतो वा विसोहिअध्दाए । क.प्र. उप. २७ चारित्र-मोहनीयस्योपशमना क्षीणसप्तकस्य वैमानिकेष्वेव बध्दायुष्कस्य भवति । अबध्दायुष्कस्तु क्षपकश्रेणिमारोहति । यस्तु वेदकसम्यग्दृष्टि: सन्नुपशमश्रेणिं प्रतिपद्यते सोऽनियतो बध्दायुष्कोऽबध्दायुष्को वा । स च केषाञ्चिन्मते-नानन्तानुबन्धिनो विसंयोज्य चतुर्विशतिसत्कर्मा सन् प्रतिपद्यते । केषाञ्चित्पुनर्मतेनोपशमय्यापि, ततो विसंयोजितानन्तानुबन्धिकषाय उपशमितानंतानुबन्धिकषायो वा सन् दर्शनत्रितयमुपशमयति । अथवा x आदौ दर्शनमोहनीयं क्षपयित्वा उपशमश्रेणिं प्रतिपद्यते, अथवा दर्शनमोहनीयं प्रथम मुपशमय्यापि प्रतिपद्यते । कथमुपशमय्येत्य त आह-श्रामण्ये संयमे स्थित्वा । पं.सं. पृ.१७६.) । सरुवं छंडिय अण्ण-पयडि-सरुवेणच्छणमणंताणुबंधीणमुवसमो (२ तत एमिस्त्रिभिरपि करणैर्यथोक्तक्रमेणानन्तानुबन्धिन: कषायानुपशमयति । x x एवमेकीयम-तेनानन्तानुबन्धिनामुपशमोऽमिहित:, अन्ये त्वनन्तानुबन्धिनां विसंयोजनामेवामिदधति । आ.चा.पृ.२७१.)। दंसणतियस्स उदयाभावो उवसमो,(३ करणपरिणामेहि निस्सत्तीकयस्स दंसणमोहणीयस्स उदयपज्जाएण विणा अवट्ठाणमुवसमो त्ति । जयध.अ.पृ.९५४. दर्शनमोहस्य प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशानामुपशमेन उदयायोग्यभावेन जीव: उपशान्त: उपशमसम्यग्दृष्टिर्भवति । ल.क्ष.सं.टी.१०२.) तेसिमुवसंताणं पि ओकड्डुक्कड्डुण-पर-पयडि-संकमाणमत्थित्तादो । अपुव्वकरणे ण एक्कं पि कम्ममुवसमदि । किंतु अपुव्वकरणो पडिसमय मणंतगुण-

विसोहीए वड्ढंतो अंतोमुहुत्तेणंतोमुहुत्तेण एक्केक्कं ट्ठिदि-खंडयं घादेंतो संखेज्जसहस्साणि ट्ठिदि-खंडयाणि घादेदि, तत्तियमेत्ताणि ट्ठिदि-बंधोसरणाणि

मिथ्यात्व इन सात प्रकृतियोंका असंयतसम्यग्दृष्टिसे अप्रमत्तसंयत गुणस्थानतक इन चार गुणस्थानोंमें रहनेवाला कोई भी जीव उपशम करनेवाला होता है । अपने स्वरुपको छोडकर अन्य प्रकृतिरुपसे रहना अनन्तानुबन्धीका उपशम है । दर्शनमोहनीयको तीन प्रकृतियोंका उदयमें नहीं आना ही उपशम है, क्योंकि, उपशान्त हुई, उन तीन प्रकृतियोंका उत्कर्षण, अपकर्षण और परप्रकृतिरुपसे संक्रमण पाया जाता है । अपूर्वकरण गुणस्थानमें एक भी कर्मका उपशम नहीं होता है । किंतु अपूर्वकरण गुणस्थानवाला जीव प्रत्येक समयमें अनन्तगुणी विशुध्दिसे बढता हुआ एक एक अन्तर्मुहूर्तसे एक एक स्थिति-खण्डका घात करता हुआ संख्यात हजार स्थिति-खण्डोंका घात करता है । और उतने ही स्थिति-बंधापसरणोंको करता हैं । तथा

करेदि । एक्केक्कं दिट्ठि-खंडय-कालब्भंतरे संखेज्ज-सहस्साणि अणुभाग-खंडयाणि घादेदि (१ अ.ब.पादेदि।)। पडिसमयमसंखेज्जगुणाए सेढीए पदेस-णिज्जरं करेदि । जे अप्पसत्थ-कम्मंसे ण बंधदि तेसिं पदेसग्गमसंखेज्ज-गुणाए सेढीए अण्ण-पयडीसु बज्झमाणियासु संकामेदि । पुणो अपुव्वकरणं वोलेऊण अणियट्टि-गुणट्ठाणं पविसिऊणंतोमुहुत्तमणेणेव विहाणेणच्छिय बारस-कसाय-णव-णोकसायाणमंतरं (२ अंतरं विरहो सुण्णभावो त्ति एयट्ठो तस्स करणमन्तरकरणं । हेट्ठा उवरिं च केत्तियाओ ट्ठदीओ मोत्तूण मज्झिल्लाणं ट्ठदीणं अंतोमुहुत्तपमाणाणं णिसेगे सुण्णत्तसंपादणमंतरकरणमिदि । जयघ. अ.प्र. १००९.) अंतोमुहुत्तेण करेदि । अंतरकद-पढम-समयादो (३ मु. अंतरे कदे पढमसमयादो।) उवरि अंतोमुहुत्तं गंतूण असंखेज्ज-गुणाए सेढीए णउंसय-वेदमुवसामेदि । उवसमो णाम किं ? उदय उदीरण-ओकड्डुक्कड्डुण-परपयडिसंकम-ट्ठिदि-अणुभाग-खंडयघादेहि विणा अच्छणमुवसमो (४ आत्मनि कर्मण: स्वशक्ते: कारणवशादनुद्भूतिरुपशम: । यथा कतकादिद्रव्यसंम्बन्धादम्भसि पङ्कस्योपशम:। स.सि. २.१. कर्मणोऽनुद्भूतस्ववीर्यवृत्तितोपशमोऽध:प्रापितपङ्कवत् । त.रा. २.१.१. अनुद्भूतस्वसामर्थ्यवृत्तितोपशमो मत: । कर्मणां पुंसि तोयादावध:प्रापितपङ्कवत् ।। त. श्लो. वा. २.१.२. उपशमिता नाम यथा रेणुनिकर: सलिलबिन्दुनिवहैरभिषिच्याभिषिच्य द्रुघणादिभिर्निष्कुट्टितो निष्पन्दो भवति तथा कर्मरेणुनिकरोऽपि विशोधिसलिलप्रवाहेण परिषिच्य परिषिच्यानिवृत्तिकरणरुपद्रुघणनिष्कुट्टित: संक्रमणोद-

योदीरणानिधत्तिनिकाचनाकरणानामयोग्यो भवति । क.प्र.पृ.२६७.)। तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण णवुंसयवेदमुवसमिद-विहाणेणित्थिवेदमुवसामेदि । तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण तेणेव

एक एक स्थिति-खण्डके कालमें संख्यात हजार अनुभाग-खण्डोंका घात करता है । और प्रतिसमय असंख्यात-गुणित-श्रेणीरुपसे प्रदेशोंकी निर्जरा करता है । तथा जिन अप्रशस्त प्रकृतियोंका बन्ध नहीं होता है, उनके प्रदेशोंको उस समय बंधनेवाली अन्य प्रकृतियोंमें असंख्यातगुणित श्रेणीरुपसे संक्रमण करता है । पुन: अपूर्वकरण गुणस्थानको उल्लंघन करके और अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें प्रवेश करके, एक अन्तर्मुहूर्त पूर्वोक्त विधिसे रहता है । तत्पश्चात् एक अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा बारह कषाय और नौ नोकषाय इनका अन्तर (करण) करता है ।(विवक्षित कर्मप्रकृतियोंके नीचेके व ऊपरके निषेकोंको छोडकर बीचके कितने ही निषेकोंके द्रव्यको अन्य निषेकोंके द्रव्यमें निक्षेपण करके बीचके निषेकोंके अभाव करनेको अन्तर-करण कहते हैं ।) अन्तरकरणविधिके हो जाने पर प्रथम समयसे लेकर ऊपर अन्तर्मुहुर्त जाकर असंख्यातगुणी श्रेणीके द्वारा नपुंसकवेदका उपशम करता है ।

शंका-- उपशम किसे कहते हैं ?

समाधान-- उदय, उदीरणा, उत्कर्षण, अपकर्षण, परप्रकृतिसंक्रमण, स्थिति-काण्डक-घात और अनुभाग-काण्डकघातके विना ही कर्मोंके सत्तामें रहनेको उपशम कहते हैं ।

तदनन्तर एक अन्तर्मुहूर्त जाकर नपुंसकवेदकी उपशमविधिसे ही स्त्रीवेदका

विहिणा छण्णोकसाए पुरिसवेद-चिराण-संत-कम्मेण सह जुगवं उवसामेदि (१ ल.क्ष.गा.२६२. इत्यत्र विशेषो द्रष्टव्य:।) । तदो उवरि समऊण-बे-आवलियाओ गंतूण पुरिसवेद-णवक-बंधमुवसामेदि । तत्तो अंतोमुहुत्तमुवरिं गंतूण पडिसमयमसंखेज्जगुणाए सेढीए (२ मु. -मसंखेज्जाए गुणसेढीए,) अपच्चक्खाण-पच्चक्खाणा-वरणसण्णिदे दोण्णि वि कोधे कोध-संजलण-चिराण-संतकम्मेण सह जुगवमुवसामेदि । तत्तो उवरि दो आवलियाओ समऊणाओ गंतूण कोध-संजलण-णवक-बंधमुवसामेदि । तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण तेसिं चेव दुविहं माणमसंखेज्जाए गुणसेढीए माणसंजलण-चिराण-संत-कम्मेण सह जुगवं उवसामेदि । तदो समऊण-दो-आवलियाओ गंतूण माणसंजलणमुवसामेदि । तदो पडिसमयमसंखेज्जगुणाए सेढीए उवसामेंतो अंतोमुहुत्तं गंतूण दुविघं मायं माया-संजलण-चिराण-संत-कम्मेण सह जुगवं उवसामेदि । तदो दो (३ अ.ब. तदो आवलियाओ) आवलियाओ समऊणाओ गंतूण माया-संजलणमुवसामेदि । तदो समयं

पडि असंखेज्जगुणाए सेढीए पदेसमुवसामेंतो अंतोमुहुत्तं गंतूण लोभ-संजलण-चिराण-संत-कम्मेण सह पच्चक्खाणापच्चक्खाणावरण-दुविहं लोभं लोभ-वेदगध्दाए विदिय-ति-भागे

उपशम करता है । फिर एक अन्तर्मुहुर्त जाकर उसी विधिसे पुरुषवेदके (एक समय कम दो आवलीमात्र नवकसमयप्रबध्दोंको छोडकर बाकीके संपूर्ण) प्राचीन सत्तामें स्थित कर्मके साथ छह नोकषायका उपशम करता है । इसके आगे एक समय कम दो आवली काल बिता कर पुरुषवेदके नवक समयप्रबध्दका उपशम करता है । इसके पश्चात् प्रत्येक समयमें असंख्यातगुणी श्रेणीके द्वारा संज्वलनक्रोधके एक समय कम दो आवलीमात्र नवक समयप्रबध्दको छोडकर पहलेके सत्तामें स्थित कर्मोंके साथ अप्रत्याख्यान और प्रत्याख्यान क्रोधोंका एक अन्तर्मुहूर्तमें एकसाथ ही उपशम करता है । इसके पश्चात् एक समय कम दो आवलीमें क्रोधसंज्वलनके नवक-समयप्रबध्दका उपशम करता है । तत्पश्चात् प्रतिसमय असंख्यातगुणी श्रेणीके द्वारा संज्वलनमानके एक समय कम दो आवलीमात्र नवक-समयप्रबध्दको छोडकर प्राचीन सत्तामें स्थित कर्मोंके साथ अप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यानमानका एक अन्तर्मुहूर्तमें उपशम करता है । इसके पश्चात् एक समय कम दो आवलीमात्र कालमें संज्वलनमानके नवक-समयप्रबध्दका उपशम करता है । तदनन्तर प्रतिसमय असंख्यात गुणित श्रेणीरूपसे उपशम करता हुआ, मायासंज्वलनके नवक-समयप्रबध्दको छोडकर प्राचीन सत्तामें स्थित कर्मोंके साथ अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान मायाका अन्तर्मुहूर्तमें उपशम करता है । तत्पश्चात् एक समय कम दो आवलीमात्र कालमें माया संज्वलनके नवक-समयप्रबध्दका उपशम करता है । तत्पश्चात् प्रत्येक समयमें असंख्यात-गुणी श्रेणीरूपसे कर्मप्रदेशोंका उपशम करता हुआ, लोभवेदके दूसरे त्रिभागमें सूक्ष्मकृष्टिको करता हुआ संज्वलनलोभके नवक-समयप्रबध्दको छोडकर प्राचीन सत्तामें स्थित कर्मोंके साथ प्रत्याख्यान, अप्रत्याख्यान इन दोनों लोभोंका एक अन्तर्मुहूर्तमें उपशम करता है । इस तरह

संत-परूवणाणुयोगद्दारे गदिमग्गणापरूवणं

सुहुमकिट्टीओ करेंतो उवसामेदि । सुहुमकिट्टिं मोत्तूण अवसेसो बादरलोभो फद्दयं गदो सव्वो (१ (यत्र) स्थितिसत्त्वमावलिमात्रमवशिष्यते तदुच्छिष्टावलिसंज्ञम् । ल.क्ष.११३.) णवकबंधुच्छिट्ठावलिय-वज्जो अणियट्टि-चरिम-समए उवसंतो (२ ल. क्ष. २९५. संज्वलनबादरलोभस्य प्रथमस्थितौ उच्छिष्ठावलिमात्रेऽवशिष्टे उपशमनावलि-चरमसमये लोभत्रयद्रव्यं सर्वमप्युपशमितं भवति । तत्र सूक्ष्मकृष्टिगतद्रव्यं समयोनद्वयावलिमात्रसमयप्रबध्द-नवकबन्धद्रव्यं उच्छिष्ठावलिमात्रनिषेकद्रव्यं च नोपशमयति । एतद्द्रव्यत्रयं मुक्त्वा लोभत्रयस्य सर्वमपि सत्त्वद्रव्यमुपशमितमित्यर्थः। सं.टी.)।

णवुंसयवेदप्पहुडि जाव बादरलोभ-संजलणो त्ति ताव एदासिं पयडीणमणियट्टी उवसामगो होदि । तदो णंतर-समए सुहुमकिट्टि-सरू वं लोभं वेदंतो णट्ठ-अणियट्टि-सण्णो सुहुमसांपराइओ होदि । तदो सो अप्पणो चरिम-समए लोह-संजलणं सुहुमकिट्टि-सरुवं णिस्सेसमुवसामिय उवसंत-कसाय-वीदराग-छदुमत्थो होदि (३ विशेषजिज्ञासुभिर्लब्धिसारस्य चारित्रोपशमनविधिरवलोकनीय:। ल.क्ष. २०५-३५१.)। एसा मोहणीयस्स उवसामण-विही ।

सूक्ष्मकृष्टिगत लोभको छोडकर और एक समय कम दो आवलीमात्र नवक-समयप्रबध्द तथा उच्छिष्टावली मात्रनिषेकोंको छोडकर शेष स्पर्ध्दकगत संपूर्ण बादरलोभ अनिवृत्तिकरणके चरम समयमें उपशान्त हो जाता है । इस प्रकार नपुंसकवेदसे लेकर जब तक बादर-संज्वलन-लोभ रहता है तबतक अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवाला जीव इन पूर्वोक्त प्रकृतियोंका उपशम करनेवाला होता है । इसके अनन्तर समयमें जो सूक्ष्मकृष्टिगत लोभका अनुभव करता है और जिसने अनिवृत्ति इस संज्ञाको नष्ट कर दिया है, ऐसा जीव सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्ती होता है । तदनन्तर वह अपने कालके चरम समयमें सूक्ष्मकृष्टिगत संपूर्ण लोभ-संज्वलनका उपशम करके उपशान्तकषाय-वीतराग-छद्मस्थ होता है । यह मोहनीयकी उपशमनविधि है ।

विशेषार्थ--लब्धिसार आदि ग्रन्थोंमें द्वितीयोपशम सम्यक्त्वकी उत्पत्ति अपमत्त-संयत गुणस्थानमें ही बतलाई है, किन्तु यहां पर उपशमन विधिके कथनमें उसकी उत्पत्ति असंयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसंयत गुणस्थानतक किसी भी एक गुणस्थानमें बतलाई गई है । धवलामें प्रतिपादित इस मतका श्वेताम्बर संप्रदायमें प्रचलित कर्मप्रकृति आदि ग्रंथोंमें देखनेमें आता है ।

तथा अनन्तानुबन्धीके अन्य प्रकृतिरुपसे संक्रमण होनेको ग्रन्थान्तरोंमें विसंयोजना कहा है, और यहां पर द्वितीयोपशमका प्रकरण होनेसे उसे उपशम कहा है । सो यह केवल शब्द भेद है । स्वयं वीरसेन स्वामीको द्वितीयोपशम सम्यक्त्वमें अनन्तानुबन्धीका अभाव इष्ट है ।

उपशमन और क्षपण विधिमें सर्वत्र एक समय कम दो आवलीमात्र नवक-समय-प्रबध्दका उल्लेख आया है । और वहीं पर यह भी बतलाया है कि इनका प्राचीन सत्तामें स्थित कर्मोंके साथ उपशमन या क्षपण न होकर अनन्तर उतने ही कालमें एक एक निषेकके

खवण-विहिं वत्तइस्सामो । खवणं णाम किं ? अट्ठण्हं कम्माणं मूलुत्तर-भेय-भिण्ण-पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसाणं जीवादो जो णिस्सेस-विणासो तं खवण णाम (१ क्षय आत्यन्तिकी निवृत्ति: । यथा

तस्मिन्नेवाम्भसि शुचिभाजनान्तरसंक्रान्ते पङ्कस्यात्यन्ताभावः। स.सि. २.१.त.रा.वा. २.१.२. त.श्लो.वा. २.१.३.) । अणंताणुबंधि-कोध-माण-माया-लोभ-मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-सम्मत्तमिदि एदाओ सत्तपयडीओ असंजदसम्माइट्ठी संजदासंजदो वा पमत्तसंजदो वा अप्पमत्तसंजदो वा खवेदि (२. पढमकसायचउक्कं इत्तो मिच्छत्तमीससम्मत्तं । अविरयसम्मे देसे पमत्ति अपमत्ति खीअंति । क.ग्रं. ६. ७८.) । किमक्कमेण किं कमेण खवेदि ? ण, पुव्वमणंताणुबंधि-चउक्कं तिण्णि वि

क्रमसे उपशम या क्षय होता है । इसका यह अभिप्राय है कि जिन कर्मप्रकृतियोंकी बन्ध, उदय और सत्त्व-व्युच्छित्ति एकसाथ होती है, उनके बन्ध और उदय-व्युच्छित्तिके कालमें एक समय कम दो आवलीमात्र नवक-समयप्रबध्द रह जाते हैं, जिनकी सत्त्व-व्युच्छित्ति अनन्तर होती है । वह इस प्रकार कि विवक्षित (पुरुषवेद आदि) प्रकृतिके उपशमन या क्षपण होनेके दो आवली काल अवशिष्ट रह जानेपर द्विचरमावलीके प्रथम समयमें बंधे हुए द्रव्यका, बन्धावलीको व्यतीत करके चरमावलीके प्रथम समयसे लेकर प्रत्येक समयमें एक एक फालिका उपशम या क्षय होता हुआ चरमावलीके अन्त समयमें संपूर्णरीतिसे उपशम या क्षय होता है । तथा द्विचर-मावलीके द्वितीय समयमें जो द्रव्य बंधता है, उसका चरमावलीके द्वितीय समयसे लेकर अन्त समयतक उपशम या क्षय होता हुआ अन्तिम फालिको छोडकर सबका उपशम या क्षय होता है । इसी प्रकार द्विचरमावलीके तृतीयादि समयसे बंधे हुए द्रव्यका बन्धावलीको व्यतीत करके चरमावलीके तृतीयादि समयसे लेकर एक एक फालिका उपशम या क्षय होता हुआ क्रमसे दो आदि फालिरुप द्रव्यको छोडकर शेष सबका उपशम या क्षय होता है । तथा चरमावलीके प्रथमादि समयोंमें बंधे हुए द्रव्यका उपशम या क्षय नहीं होता है, क्योंकि, बंधे हुए द्रव्यका एक आवली तक उपशम नहीं होता, ऐसा नियम है । इस प्रकार चरमावलीका संपूर्ण द्रव्य और द्विचरमावलीका एक समयकम आवलीमात्र द्रव्य उपशम या क्षय रहित रहता है, जिसका प्राचीन सत्तामें स्थित कर्मके उपशम या क्षय हो जानेके पश्चात् ही उपशम या क्षय होता है ।

अब क्षपणविधिको कहते हैं-

शंका--क्षय किसे कहते हैं -

समाधान-जिनके मूलप्रकृति और उत्तरप्रतिके भेदसे प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध और प्रदेशबन्ध अनेक प्रकारके हो जाते हैं, ऐसे आठ कर्मोंका जीवसे जो अत्यन्त विनाश हो जाता है उसे क्षपण (क्षय) कहते हैं । अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया और लोभ, तथा मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और

सम्यक्प्रकृति, इन सात प्रकृतियोंका असंयतसम्यग्दृष्टि, संयतासंयत, प्रमत्तसंयत अथवा अप्रमत्तसंयत जीव नाश करता है ।

शंका--इन सात प्रकृतियोंका क्या युगपत् नाश करता है या क्रमसे ?

संत-परू वणाणुयोगद्दारे गदिमग्गणापरू वणं

करणाणि काऊण अणियट्टि-करण-चरिम-समए अक्कमेण खवेदि । पच्छा पुणो वि तिण्णि वि करणाणि काऊण अधापवत्त-अपुव्वकरणाणि दो वि वोलिय अणियट्टिकरणध्दाए संखेज्जे भागे गंतूण मिच्छत्तं खवेदि । तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण सम्मामिच्छत्तं खवेदि । तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण सम्मत्तं खवेदि (१ अयदचउक्कं तु अणं अणियट्टिकरणचरिमम्हि । जुगवं संजोगिता पुणो वि अणियट्टिकरणबहुभागं ।। वोलिय कमसो मिच्छं मिस्सं सम्मं खवेदि कमे । गो.क. ३६५, ३६६.)। तदो अधापवत्तकरणं कमेण काऊणंतोमुहुत्तेण अपुव्वकरणो होदि । सो ण एक्कं पि कम्मं क्खवेदि, किंतु समयं पडि असंखेज्ज-गुणसरू वेण पदेस-णिज्जरं करेदि । अंतोमुहुत्तेण एक्केक्कं ट्ठिदि-खंडय घादेंतो (२.मु.कंडयं अ.ब.पादेंतो।) अप्पणो कालब्भंतरे संखेज्ज-सहस्साणि ट्ठिदि-खंडयाणि घादेदि (३.मु.कंडयाणि अ.ब. पादेदि।) । तत्तियाणि चेव ट्ठिदि-बंधोसरणाणि वि करेदि । तेहिंतो संखेज्ज-सहस्स-गुणे अणुभाग-खंडय-घादे करेदि 'एक्काणुभाग-खंडय-उक्कीरण-कालादो एक्कं ट्ठिदि-खंडय-उक्कीरण-कालो संखेज्ज-गुणो' त्ति सुत्तादो । एवं काऊण अणियट्टि-गुणट्ठाणं पविसिय तत्थ वि अणियट्टि-

समाधान-नहीं, क्योंकि, तीन करण करके अनिवृत्तिकरणके चरम समयमें पहले अनन्तानुबन्धी चारका एक साथ क्षय करता है । तत्पश्चात् फिरसे तीनोंही करण करके, उनमें से अध:करण और अपूर्वकरण इन दोनों को उल्लंघन करके अनिवृत्तिकरणके संख्यातबहुभाग व्यतीत हो जानेपर मिथ्यात्वका क्षय करता है । इसके अनन्तर अन्तर्मुहूर्त व्यतीतकर सम्यग्मिथ्यात्वका क्षय करता है । तत्पश्चात् अन्तर्मुहूर्त व्यतीतकर सम्यक्प्रकृतिका क्षय करता है ।

इस तरह क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव सातिशय अप्रमत्त गुणस्थानको प्राप्त होकर जिस समय क्षपणविधिका प्रारम्भ करता है, उस समय अध:प्रवृत्तकरणको करके क्रमसे अन्तर्मुहूर्तमे अपूर्वकरण गुणस्थानवाला होता है । वह एक भी कर्मका क्षय नहीं करता है, किंतु प्रत्येक समयमें असंख्यातगुणितरू पसे कर्म-प्रदेशोंकी निर्जरा करता है । एक एक अन्तर्मुहूर्तमें एक एक स्थितिकाण्डकका घात करता हुआ अपने कालके भीतर संख्यात-हजार स्थितिकाण्डकोंका घात करता है । और उतने ही स्थितिबन्धापसरण करता है । तथा उनसे संख्यात-हजार-गुणे अनुभागकाण्डकोंका घात

करता है, क्योंकि, एक अनुभागकाण्डकके उत्कीरण कालसे एक स्थितिकाण्डकका उत्कीरण-काल संख्यातगुणा है, ऐसा सूत्र-वचन है । इस प्रकार अपूर्वकरण गुणस्थानसंबन्धी क्रियाको करके और अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें प्रविष्ट होकर, वहां पर भी अनिवृत्तिकरण कालके संख्यात बहु भागको अपूर्वकरणके समान स्थितिकाण्डक-घात आदि विधिसे बिताकर अनिवृत्तिकरणके कालमें संख्यातवां भाग शेष रहने पर स्त्यानगृध्दि, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला, नरकगति, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति, चतुरिन्द्रियजाति,

छक्खंडागमे जीवट्ठाणं

अध्दाए संखेज्जे भागे अपुव्वकरण-विहाणेण गमिय अणियट्टि-अध्दाए संखेज्जे भागे सेसे थीणगिध्दि-तियं णिरयगइ-तिरियगइ-एइंदिय-बीइंदिय-तीइंदिय-चउरिंदियजादि-णिरयगइ-तिरिय-गइपाओग्गाणुपुव्वि-आदावुज्जोव-थावर-सुहुम-साधारण-(२.पु.साहारणा।)त्ति एदाओ सोलस पयडीओ खवेदि । तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण पच्चक्खाणापच्चक्खाणावरण-कोध-माण-माया-लोभे अक्कमेण खवेदि (३ णिरयतिरिक्खदु वियलं थीणतिगुज्जोव ताव एइंदी । साहरणसुहूमथावर सोलं मज्झं कसायट्ठं ।। गो.क. ३३८. अणियट्टिबायरे थीणगिध्दितिगे निरयतिरियनामाओ । संखेज्जइमे सेसे तप्पाउग्गाओ खीअंति ।। इत्तो हणइ कसायट्ठगंपि xx क.ग्रं. ७८, ७९.) । एसो संत-कम्म-पाहुड-उवएसो । कसाय-पाहुड-उवएसो पुण अट्ठ-कसाएसु खीणेसु पच्छा अंतोमुहुत्तं गंतूण सोलस-कम्माणि खवेज्जंति(४तदो अट्ठकसायट्ठिदिखंडयपुधत्तेण संकामिज्जंति । जयध. अ.पृ.१०७८. तदो ट्ठिदिखंडय-पुधत्तेण अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए उक्किण्णे एदेसिं सोलसण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्ममावलियब्भंतरं सेसं । जयध अ.पृ. १०७९. x x खवगा पुव्वं खवित्तु अट्ठा य । पच्छा सोलादीणं खवणं इदि केहिं णिद्दिट्ठं । गो.क. ३९१. प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानाष्टकमन्तयेद् गुणे नवमे । तस्मिन्नर्धक्षपिते क्षपयेदिति षोडश प्रकृतीः ।। x x x अर्धदग्धेन्धनो वन्हिर्दहेत्प्राप्येन्धनान्तरम् । क्षपकोऽपि तथात्रान्तः क्षपयेत्प्रकृतीः पराः।। कषायाष्टकशेषं च क्षपयित्वाऽन्तयेत् क्रमात् । क्लीबस्त्रीवेदहास्यादिषट्कपूरुषवेदकान् ।। एष सूत्रादेशः । अन्ये पुनराहुः, षोडश कर्माण्येव पूर्व क्षपयितुमारभते, केवलमपान्तरालेऽष्टौ कषायान् क्षपयति, पश्चात् षोडश कर्माणीति कर्मग्रन्थवृत्तौ ।। लो.प्र., प्र.भा.पृ. ६८.) त्ति । एदे दो वि उवएसा सच्चमिदि के वि भण्णंति, तण्ण घडदे, विरुध्दत्तादो सुत्तादो । दो वि पमाणा इति वयणमवि ण घडदे, 'पमाणेण पमाणा-विरोहिणा होदव्वं' इदि णायादो । णाणा-जीवाणं णाणाविह-सत्ति-संभवाविरोहादो केसिं चि जीवाणं णट्ठेसु अट्ठसु कसाएसु पच्छा सोलसकम्म-क्खवण-सत्ती समुप्पज्जदि

नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, तिर्यंचगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, आताप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण इन सोलह प्रकृतियोंका क्षय करता है । फिर अन्तर्मुहूर्त व्यतीतकर प्रत्याख्यानावरण और अप्रत्याख्यानावरणसम्बन्धी क्रोध, मान, माया और लोभ इन आठ प्रकृतियोंका एकसाथ क्षय करता हैं । यह सत्कर्मप्राभृतका उपदेश है । किंतु कषायप्राभृतका उपदेश तो इस प्रकार है कि पहले आठ कषायोंके क्षय होजाने पर पीछेसे एक अन्तर्मुहूर्तमें पूर्वोक्त सोलह कर्म प्रकृतियां क्षयको प्राप्त होती हैं । ये दोनों ही उपदेश सत्य हैं, ऐसा कितने ही आचार्योंका कहना हैं । किंतु उनका ऐसा कहना घटित नहीं होता है, क्योंकि, उनका ऐसा कहना सूत्रसे विरुध्द पडता है । तथा दोनों कथन प्रमाण है, यह वचन भी घटित नहीं होता है, क्योंकि, 'एक प्रमाणको दूसरे प्रमाणका विरोधी नहीं होना चाहिये' ऐसा न्याय है ।

*संत-परू वणाणुयोगद्दारे गदिमग्गणापरू वणं

त्ति तेण पच्छा सोलस-कम्म-क्खयो होदि, 'त्ति तेण पच्छा सोलस-कम्म-क्खयो होदि, 'कारणकमाणुसारी (१मु.कम्माणुसारी कज्जकमो।) कज्जक्कमो' त्ति णायादो । केसिं चि जीवाणं पुव्वं सोलस-कम्म-क्खवणसत्ती समुप्पज्जदि, पच्छा अट्ठ-कसाय-क्खवण-सत्ती उप्पज्जदि त्ति णट्ठेसु सोलस-कम्मेसु पच्छा अंतोमुहुत्ते अदिक्कंते अट्ठ कसाया णस्संति । तदो ण दोण्हं उवएसाणं विरोहो त्ति केवि भणंति, तण्ण घडदे । किं कारणं ? जेण अणियट्टिणो णाम जे कि वि एग-समए वट्टमाणा ते सव्वे वि अदीदाणागद-वट्टमाण-कालेसु समाण-परिणामा, तदो चेय ते समाण-गुणसेढि-णिज्जरा वि । अह भिण्ण-परिणामा वुच्चंति तो क्खहिं ण ते अणियट्टिणो, भिण्ण-परिणामादो अपुव्वकरणा इव । ण च कम्म-क्खंधाण असंखेज्ज-गुणसेढीए खवण-हेदु-परिणामे उज्झिऊणण्णे परिणामा ट्ठिदि-अणुभागखंडय-घादस्स कारणभूदा अत्थि, तेसिं णिरुवय-सुत्ताभावादो । 'कज्ज-णाणत्तादो कारण-णाणत्तमणुमाणिज्जदि' इदि एदमवि ण घडदे, एयादो मोग्गरादो बहु-कोडि-कवालोवलंभा । तत्थ वि होदु

शंका--नाना जीवोंके नाना-प्रकारकी शक्तियाँ संभव हैं, इसमें कोई विरोध नहीं आता है । इसलिये कितने ही जीवोंके आठ कषायोंके नष्ट हो जानेपर तदनन्तर सोलह कर्मोंके क्षय करनेकी शक्ति उत्पन्न होती है । अत: उनके आठ कषायोंके क्षय हो जानेके पश्चात्, सोलह कर्मोंका क्षय होता है । क्योंकि, 'जिस क्रमसे कारण मिलते हैं उसी क्रमसे कार्य होता है' ऐसा न्याय है । तथा कितने ही जीवोंके

पहले सोलह कर्मोंके क्षयकी शक्ति उत्पन्न होती है, और तदनन्तर आठ कषायोंके क्षयकी शक्ति उत्पन्न होती है । इसलिये पहले सोलह कर्म-प्रकृतियाँ नष्ट होती है, और इसके पीछे एक अन्तर्मुहूर्तके व्यतीत होनेपर आठ कषायें नष्ट होती हैं । इसलिये पूर्वोक्त दोनों उपदेशोंमें कोई विरोध नहीं आता है, ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं ?

समाधान--परंतु उनका ऐसा कहना घटित नहीं होता है, क्योंकि, अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवाले जितने भी जीव हैं, वे सब अतीत, वर्तमान और भविष्य काल सम्बन्धी किसी एक समयमें विद्यमान होते हुए भी समान-परिणामवाले ही होते हैं, और इसीलिये उन जीवोंकी गुणश्रेणी-निर्जरा भी समानरू पसे ही पाई जाती है । और यदि एकसमयस्थित अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवालोंको विसदृश परिणामवाला कहा जाता है, तो जिसप्रकार एक समयस्थित अपूर्वकरण गुणस्थानवालोंके परिणाम विसदृश होते हैं, अतएवं उन्हें अनिवृत्ति यह संज्ञा प्राप्त नहीं हो सकती है, उसी प्रकार इन परिणामोंको भी अनिवृत्तिकरण यह संज्ञा प्राप्त नहीं हो सकेगी । और असंख्यातगुण-श्रेणीके द्वारा कर्मस्कन्धोंके क्षपणके कारणभूत परिणामोंको छोडकर अन्य कोई भी परिणाम स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघातके कारणभूत नहीं है, क्योंकि, उन परिणामोंका निरू पण करनेवाला सूत्र (आगम) नहीं पाया जाता है ।

२. मु. के वि आइरिया भणंति ।

णाम मोग्गरो एओ, णं तस्स सत्तीणमेयत्तं, तदो एयक्खप्परुप्पत्ति-प्पसंगादो इदि चे ? तो क्खहिं एत्थ वि भवदु णाम ट्ठिदि-खंडयघाद-अणुभाग-खंडयघाद-ट्ठिदिबंधोसरण-गुणसंकम-गुणसेढि-ट्ठिदि-अणुभागबंध-परिणामाणं णाणत्तं तो वि एग-समय-संठिय-णाणा-जीवाणं सरिसा चेव, अण्णहा अणियट्टि-विसेसणाणुववत्तीदो । जइ एवं, तो सव्वेसिमणियट्टीणमेय-समयम्हि वट्टमाणाणं ट्ठिदि-अणुभागघादाणं सरिसत्तं पावेदि त्ति चे ? ण एस दोसो, इट्ठत्तादो । पढम-ट्ठिदि-अणुभाग-खंडयाणं-सरिसत्त-णियमो (१ तिकालगोयराणं सव्वेसिमणियट्टिकरणाणं समाणसमए वट्टमाणाणं सरिसपरिणामत्तादो पढमट्ठिदिखंडयं पि तेसिं सरिसमेवेत्ति णावहारेयव्वं किंतु तत्थ जहण्णुक्कस्सवियप्पसंभवादो । जयध. अ.प्र. १०७४. बादरपढमे पढमं ठिदिखंडं विसरिसं तु विदियादि । ठिदिखंडयं समाणं सव्वस्स समाणकालम्हि । पल्लस्स संखभागं अवरं तु वरं तु संखभागहियं । घादादिमट्ठिदिखंडो सेसा सव्वस्स सरिसा हु । ल.क्ष. ४१२, ४१३.) णत्थि, तदो णेदं घडदि त्ति चे ? स दोसो ण दोसो, हद-सेस-ट्ठिदि-

शंका--अनेक प्रकारके कार्य होनेसे उनके साधनभूत अनेक प्रकारके कारणोंका अनुमान किया जाता है ? अर्थात् नववें गुणस्थानमें प्रतिसमय असंख्यातगुणी कर्मनिर्जरा, स्थिति-काण्डकघात आदि अनेक कार्य देखे जाते हैं, इसलिये उनके साधनभूत परिणाम भी अनेक प्रकारके होने चाहिये ।

समाधान--यह कहना भी नहीं बनता है, क्योंकि, एक मुद्‌गरसे अनेक प्रकारके कपालरू प कार्यकी उपलब्धि होती है ।

शंका--वहां भी मुद्‌गर एक भले ही रहा आवे, परंतु उसकी शक्तियोंमें एकपना नहीं बन सकता है । यदि मुद्‌गरकी शक्तियोंमें भी एकपना मान लिया जावे तो उससे एक कपालरू प कार्यकी ही उत्पत्ति होगी ?

समाधान--यदि ऐसा है तो यहां पर भी स्थितिकाण्डकघात, अनुभागकाण्डकघात, स्थितीबन्धापसरण, गुणसंक्रमण, गुणश्रेणी शुभप्रकृतियोंके स्थितिबन्ध और अनुभागबन्धके कारणभूत परिणामोंमें नानापना रहा आवे, तो भी एक समयमें स्थित नाना जीवोंके परिणाम सदृश ही होते हैं, अन्यथा उन परिणामोंके ‘अनिवृत्ति’ यह विशेषण नहीं बन सकता है ।

शंका-यदि ऐसा है, तो एक समयमें स्थित संपूर्ण अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवालोंके स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघातकी समानता प्राप्त हो जायगी ?

समाधान--यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, यह बात तो हमें इष्ट ही है ।

शंका--प्रथम स्थितिकाण्डकघात और प्रथम-अनुभागकाण्डकोंकी समानताका नियम तो नहीं पाया जाता है, इसलिये उक्त कथन घटित नहीं होता है ?